IJAER/March-April-2022/Volume-11/Issue-2 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

गिजुभाई के शैक्षिक एवं प्राथमिक विचार

अशोक कुमार यादव
(पी.एच.डी शोधार्थी)
सनराइज विश्वविद्यालय
अलवर (राजस्थान)

डॉ0 एस. हुसैन
(एसोसिएट प्रोफेसर)
शिक्षा शास्त्र विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय
अलवर (राजस्थान)

प्रस्तावना: शिक्षा मानव में सद् एवं असद् का विवेक उत्पन्न करती है। वह हममें सहिष्णुता तथा जगत को कुछ देने की सामर्थ्य उत्पन्न करती है। शिक्षा हमें इस योग्य बनाती है कि हम अपने वैयक्तिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक निष्पादन करें। शिक्षा के संदर्भ में एपिक्टेट्स ने कहा है कि दृ "राष्ट्र की सर्वोच्च सेवा यह है कि ऊँचे–ऊँचे भवनों का निर्माण करने के बजाय नागरिकों के चरित्र का उच्चीकरण किया जाय। दासता के बंधनों में जकड़े नागरिक ऊँची–ऊँची अट्टालिकाओं में वास करें उससे अच्छा है कि उच्च आदर्शों से अनुप्राणित निर्धन नागरिक घास–फूस की झोपड़ीयों में रह लें।"

बच्चों के लिए हितकर शिक्षा व्यवस्था वह है जिसमें शिक्षक धैर्यपूर्वक बच्चों की समस्याओं को सुनकर धैर्य और कोमलतापूर्वक उनका उत्तर दे। बच्चों के स्तर के अनुरूप प्रश्न पूछे और पुनः उनका समाधान प्रस्तुत करें। तभी शिक्षा एक सशक्त माध्यम के रूप में उभरेगी और समाज में व्याप्त विसंगतियाँ समाप्त होंगी।

शिक्षा में नित्य नये नवाचारों ने चुनौतियाँ दी हैं। अतः इन चुनौतियों को स्वीकार करते हुए शिक्षक को ऐसी भूमिका अदा करनी है जिससे कि बालक स्वयं ही विद्यालय की ओर खिंचा चला आयेः

'गुरू नहीं तुम मित्र बनो अब,

नन्हें–मुन्नों को मुक्त करो अब।

प्रेरक वातावरण बनाओ,

भय तनाव से मुक्त दिलाओ ।।'

सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

भारत के अंग्रणी बाल शिक्षा शास्त्री गिजुभाई बधेका का जन्म 15 नवंबर 1885 को गुजरात के चित्तल सौराष्ट्र में हुआ था। इनके पिता भगवान दास जी बधेका और माता कशीबा काफी धार्मिक विचार के थे। गिजु भाई पर भी माता–पिता के धार्मिक विचारों को स्पष्ट प्रभाव पड़ा। पाँच वर्ष की आयु में उन्हें पढ़ने के लिए बतलथीपूर की प्राथमिक शाला में भेजा गया। यहाँ विद्यालय का वातावरण बाल सापेक्ष नहीं था। इसका प्रभाव गिजूभाई पर पड़ा उन्होंने बड़े होने पर प्राथमिक विद्यालय के दृश्यों को अपने शब्दों में बाँधा। बच्चों की वात्सलता उन्हें इतनी प्रिया थी कि अपने वकालत जैसे व्यवसाय को छोड़कर बाल

शिक्षण के क्षेत्र में सक्रिय हो गये। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा दृ "मेरे छात्रों को मेरा आदेश है कि घोड़ों के अस्तबल जैसी धूल भरी इन शालाओं को जमींदोज कर दो। मारपीट और भय दिखाने वाले इन बाल कत्तलखानों की नीवों को बारूद भरकर उड़ा दो। इन्हें नेस्तानाबूद कर दो।"

इस प्रकार गिजुभाई बालकों की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे। उनका मानना था कि बालकों को पूरी स्वतंत्रता देकर ही उन्हें भी प्रकार शिक्षित किया जा सकता है। बालक का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व है। अपनी इच्छाओं, वृत्तियों एवं सही–गलत के निर्णयों को बच्चों पर लादने से भयंकर परिणाम सामने आ सकते हैं।

गिजु भाई की रचनाएँ एवं शैक्षिक विचार

गिजुभाई के बाल शिक्षण संबंधी विचार उनकी प्रमुख पुस्तकों 'दिवास्वप्न' (1999) 'मान्तेसरी पद्धति (1999), प्राथमिक विद्यालय में भाषा शिक्षा (2001), प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा पद्धतियाँ (2001), माता–पिता से (2004), ऐसे हों शिक्षक (2001), बाल–शिक्षण जैसा मैंने समझा' (2005) प्राथमिक विद्यालय में व्यावसायिक शिक्षा (2001), कथा–कहानी (2000) के अंतर्गत स्थापित हैं। इसके अतिरिक्त चलते–फिरते शिक्षा (2006), माँ–बाप बनना कठिन है (2004) माता–पिता की माथापच्ची (2003) शिक्षकों से (2003) आदि रचनाओं से भी उनके विचारों पर प्रकाश पड़ता है।

गिजुभाई के जीवन पर सर्वाधिक प्रभाव मांटेसरी पद्धति का पड़ा। मांटेसरी पद्धति सिर्फ एक शिक्षण पद्धति ही नहीं अपितु जीवन का एक दर्शन है। यह एक नयी दृष्टि तथा एक नया प्रकार है जो शिक्षक में एक नयी पद्धति तथा नये आदर्शो का शुभारम्भ करता है। शिक्षक की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि करता है, सामाजिक निर्माण की भूमिका नये सिरे से निर्मित करता है, मनोविज्ञान को नयी दृष्टिप्रदान करता है, व्यक्ति–व्यक्ति, समाज–समाज एवं राष्ट्र–राष्ट्र के बीच संबंधों की नयी कड़ियाँ जोड़ता है तथा मनुष्य की शक्ति और उसके चारित्र्य की सफलता का नया मूल्यांकन करता है (दवे 2005)। 'दिवास्वप्न' गिजुभाई के जीवन और सच्चे अनुभवों का निचोड़ है जिसके माध्यम से उनकी कल्पना को मूर्तरूप दिया गया है और प्रारंभिक शिक्षा के नवीनीकरण की परिकल्पना को सार्थक किया गया है।

आज यह बात सर्वमान्य है कि जो बालक मानसिक रूप से स्वरूथ है वह हर काम करने की क्षमता रखता है। अर्थात् उसे पूर्ण विकसित समझना चाहिए जो कि कुशल और चतुर दोनों ही होगा। उसमें संकल्प की दृढ़ता होगी, विचारों में स्थिरता होगी और उसका व्यक्तित्व भी विशाल होगा। उसमें जिज्ञासा और ज्ञानार्जन की प्रवृत्ति का बाहुल्य होगा और यदि ये दोनों प्रवृतियाँ अनुकूल स्थिति में चली तो वह निश्चय ही अपने जीवन में सफल सिद्ध होगा। आवश्यकता इस बात की होती है कि बालक का विकास सही वातावरण में किया जाये। तब उसे चाहे जिस भी तरह का बनाया जा सकता है और वह अपनी उसी दिशा में शीर्ष स्थान पर पहुँच जायेगा। बालक के लिए दरअसल यह आवश्यकता नही होता कि उसके लिए सारे साधन आप जुटा दें या उसका हर काम, हर गुत्थी आप सुलझा दें। वह यह पसंद नहीं करता। उसे तो स्वयं कोई भी काम करके देखने की उत्कण्टा होती है और इसलिए वह इसमें किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप पसंद नहीं करता। वह तो केवल ऐसा वातावरण चाहता है, जिससे उसकी कल्पना

मुक्त होकर विकसित हो सके, जिसमें उसके विचार स्वतंत्र होकर प्रकट हो सके और जिसमें वह निर्भय होकर अपनी विश्लेषणवादी प्रवृत्ति के आधार पर हर काम को स्वयं करके देख सके।

गिजुभाई के अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बालक को स्वावलंबी, निर्भय, सृजनशील या हुनरमंद और अभिव्यक्तिशील बनाये। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि बाल–विकास के अवलोकन की कोशिश तथा प्रबंध में बालकों का शिक्षण प्रबंध भी स्वतः होता जायेगा। इस प्रकार गिजुभाई का संपूर्ण शिक्षा दर्शन बालक के इर्द–गिर्द घूमता है। उनकी स्वाभाविक वृत्तियों का सही तरीके से विकास करना ही शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। गिजुभाई के शिक्षण का आधार व्याख्यान नहीं वार्तालाप था। वह बालकों को खेल पद्धति द्वारा पढ़ाते हुए, गाना गाते हुए कार्य करना, वाद्य यंत्र बजाकर नृत्य कराते हुए, कहानी लिखवाकर, नाटक करके, बागवानी द्वारा, प्रकृति के निरीक्षण द्वारा स्वतंत्र भ्रमण कराते हुए ज्ञान प्रदान करते थे। उनका मानना था कि इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है और बालक का पूर्णरूपेण सर्वांगीक व भावात्मक विकास होता है। वर्तमान समय में भी निरंतर ऐसे शोध हो रहे हैं जिसके अंर्तगत शिक्षण में वार्तालाप की प्रासंगिकता को प्रस्थापित किया जा रहा है। पूर्ण रूप से देखा जाए तो गिजुभाई के शैक्षिक प्रणाली की निम्नलिखित विशेषतायें परिलक्षित होती हैं –

- बालकों के वैयक्तिक विकास को महत्त्व दिया गया है।
- बालकों में सृजनात्मक क्षमता के विकास को महत्त्व दिया गया है।
- गिजुभाई की शिक्षण पद्धति स्वाभाविकता पर आधारित है न कि कृत्रिमता पर।
- अनुशासन के लिए स्वक्रिया एवं स्वप्रेरणा का होना आवश्यक है न कि भय और दंड का।
- लिखने–पढ़ने की अनोखी पद्धति का विकास तथा स्वशिक्षा को महत्त्व दिया गया है।
- सामाजिकता तथा व्यवहारिकता के विकास पर बल दिया गया है।
- शिक्षक की भूमिका एक मित्र सहायक तथा पथ प्रदर्शक के रूप में प्रस्थापित किया गया है।

प्राथमिक शिक्षा एवं शिक्षण विधियाँ

स्वतंत्रता प्रापति के समय से लेकर आज तक प्राथमिक शिक्षा के विकास हेतु सरकार द्वारा अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। फिर भी सफलता नहीं मिल पा रही है। यहाँ असफलता का सबसे प्रमुख कारण है वर्तमान कक्षायी शिक्षण प्रक्रिया। आज का विद्यार्थी कक्षा में अधिकांश समय शिक्षक द्वारा कहे गये कथनों को सुनने में व्यतीत करता है। इससे वह बौद्धिक ज्ञान तो प्राप्त करता है लेकिन उस ज्ञान को व्यक्त करने एवं व्यवहार में प्रयोग करने में वह असफल रहता है। मनावैज्ञानिक अनुसंधानों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि छात्र एक ही क्रिया अधिक समय तक करते रहने से उदासीन हो जाते हैं जिससे उनका ध्यान केंद्रित नहीं हो पाता और जो बालक का अधिगम होता है वह स्थायी न होकर क्षणिक होता है।

अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षकों को उन नयी प्रक्रियाओं की ओर उन्मुख किया जाए व उनमें जागरूकता उत्पन्न की जाय जिससे विद्यार्थी कक्षा में सक्रिय रहते हुए पूर्ण मनोयोग से रूचिपूर्वक ज्ञान प्राप्त कर सके एवं प्राप्त ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग कर सके।

प्रसिद्ध बाल शिक्षा शास्त्री गिजुभाई ने ऐसी अनेक रोचक शिक्षण पद्धतियों का सूत्रपात किया है जिसे अपना कर वर्तमान शैक्षिक प्रक्रिया के दोषों को दूर किया जा सकता है।

प्रमुख शिक्षण पद्धतियाँ दृ प्रश्नोत्तर पद्धति, जोड़ीदार पद्धति, नाट्य प्रयोग पद्धति, स्वशिक्षण पद्धति, श्रवण पद्धति, चलचित्र पद्धति, प्रत्यक्ष पद्धति, कक्षा पद्धति, उन्मेष पद्धति, खेल पद्धति, सिद्धांतमूलक और दृष्टांतमूलक पद्धतियाँ इत्यादि।

विषय की प्रकृति और कक्षास्तर को ध्यान में रखते हुए शिक्षण के चयन पद्धति का समर्थन करते हुए गिजुभाई का मानना है कि प्रश्नोत्तर पद्धति विशेष रूप से प्राथमिक विद्यालयों की शुरू की कक्षाओं में सफल हो सकती है। प्राथमिक शालाओं में अनुभव, प्रयोग और अवलोकन के सहारे ही ज्ञान का मार्ग खुलना चाहिए। भाषा, गणित, इतिहास और भूगोल को पढ़ाने में नाट्य प्रयोग पद्धति का अच्छा उपयोग किया जा सकता है। यह एक ऐसा सुंदर साधन है जिसकी मदद से इतिहास को दृष्टि देने का काम, विषय के प्रति रूचि जगाने और तथ्यों को सरलता से याद किया जा सकता है। स्वयं शिक्षण पद्धति में बालक स्वयं ही ज्ञान प्राप्त करता रहता हे। शिक्षण बालक को सीधे–सीधे सिखाता नहीं बल्कि ऐसे प्रबोधक वातावरण की रचना कर देता है जिससे विद्यार्थी स्वयं ही इस वातावरण में आने के लिए उत्प्रेरित होता है और अपनी पसंद के काम को चुनकर स्वयं ज्ञान प्राप्त करके आनी शक्तियों का विकास करता है। श्रवण पद्धति के माध्यम से ही छोटे–छोटे बच्चों को मातृभाषा सिखायी जाती है। बालकों को बार–बार कहानियों के द्वारा श्रवण करने से बहुत कुछ बातें बिना रटे ही जबानी याद करायी जा सकती है। इसके साथ ही साहित्य–सृजन की शक्ति भी विकसित की जा सकती है। बच्चों को जो कुछ सीखना हो यदि उसे प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा सिखाया जाए तो वे जल्दी सीखते हैं। गिजुभाई ने अपने शैक्षिक प्रयोगों में कहानी के माध्यम से विभिन्न विषयों की जानकारी सुरूचिपूर्ण ढंग से दी। गिजुभाई का मानना था कि ज्ञान प्राप्त करने की बालक की अपनी कुछ स्वभाविक आदतें होती हैं, जैसे–ज्ञात में से अज्ञात में जाना, स्थूल से सूक्ष्म में जाना, अपनी उम्र के हिसाब से विकसित इंद्रियों द्वारा ज्ञान प्राप्त करना। यदि बालक की इन सहज प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर शिक्षण किया जाए तो वह अधिक प्रभावशाली होगा। उन्मेष पद्धति में पहले स्थूल बातें सिखायी जाती हैं बाद में उनके आस–पास की छोटी–छोटी बातें और अन्त में बिलकुल सूक्ष्म बातें। इस तरह बालक सरलता पूर्वक तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इतिहास का शिक्षण इस विधि द्वारा किया जा सकता है। गणित, व्याकरण आदि विषयों में भी इस पद्धति का प्रयोग लाभदायक है। गिजुभाई खेल विधि द्वारा पढ़ाने के प्रबल समर्थक थे। उनका मानना था कि यदि शिक्षक बालकों के साथ घुल–मिलकर विभिन्न खेलों के माध्यम से ज्ञान प्रदान करें तो वह बच्चों का सबसे प्रिय शिक्षक बन जाएगा और इस तरह बालक जब अपनी रूचि, क्षमता और योग्यता के अनुसार ज्ञान प्राप्त

करेगा तो वह आगे चलकर एक योग्य, बुद्धिमान, कर्त्तव्यनिष्ठ व सृजनशील नागरिक बनेगा। आज की शिक्षा व्यवस्था में वैज्ञानिक दृष्टि का विकास बहुत महत्त्व की बात है। अतः बाल कक्षा से लेकर आगे तक विद्यार्थियों को दृष्टांत मूलक पद्धति से पढ़ाया जाना चाहिए।

प्राथमिक शिक्षा की समस्याओं के संदर्भ में गिजुभाई के विचारों का अनुप्रयोग –

सही संदर्भों में प्राथमिक शिक्षा ही जीवन की प्रयोगशाला है लेकिन प्राथमिक शिक्षा में अनेक समस्याएँ विद्यमान हैं जो निम्नलिखित हैं –

- बालकों के ऊपर अत्यधिक शैक्षिक बोझ का होना।
- शिक्षा के प्रति बच्चों में जिज्ञासाओं का अभाव।
- पाठ्यक्रम का अमनोवैज्ञानिक होना।
- शैक्षणिक वातावरण में अतिकृत्रिमता।
- बाल मनोवृत्ति पर ध्यान न दिया जाना।
- पाठ्यक्रम का बालकेंद्रित न होकर शिक्षक केंद्रित व विषय वस्तु केंद्रित होना।
- बालकों में सृजनात्मक गुणों के विकास पर बल न देना।
- शिक्षकों में प्राथमिक शिक्षा के प्रति उदासीनता एवं संवेदनहीनता।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं का समुचित प्रयोग न होना
- शिक्षकों में अभिभावकत्व बोध की कमी।
- विद्यालयीय शिक्षा का झुकाव प्रश्न करने की ओर नहीं बल्कि बने–बनाये उत्तर देने की ओर होना।
- शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य परीक्षा में अधिक से अधिक अंक प्राप्त करना।

एकमात्र गिजुभाई ही ऐसे महान भारतीय शिक्षा शास्त्री हुए हैं जिनका अध्ययन क्षेत्र बालकेंद्रित शिक्षा, बाल शिक्षण पद्धति एवं बाल मनोविज्ञान से संबंधित रहा है। अतः उपरोक्त समस्याओं के आलोक में यदि गिजुभाई के विचारों को प्रस्थापित किया जाए तो उससे प्राथमिक शिक्षा की जो विसंगतियाँ हैं उन्हें दूर किया जा सकता है एवं प्राथमिक शिक्षा को वास्तविक अर्थों में जीवन की प्रयोगशाला के रूप में स्थापित किया जा सकता है। जिसके फलस्वरूप –

- शैक्षिक वातावरण आन्नदायी होगा और छात्रों को स्वस्फुरण के अवसर प्रदान होंगे।
- बालकों में आंतरिक क्षमताओं का पूर्ण विकास होगा।
- बालकों में शिक्षा के प्रति अरूचि की जगह जिज्ञासा उत्साह, निडरता और मित्रता जैसे गुणों का पोषण होगा।

- शिक्षकों की एकतरफा भूमिका समाप्त होगी और बालकों को स्वयं को जांचने व परखने का अवसर प्राप्त होगा।
- बालकों में तर्क, चिंतन, विश्लेषण व वर्गीकरण करने तथा सृजनात्मक क्षमता का विकास होगा।
- बालकों में दण्डात्मक अनुशासन के बजाय स्वक्रिया एवं स्वप्रेरणा के द्वारा अनुशासन स्थापित होगा।
- नाट्य गीत, नृत्य, संगीत, निबंध शैली की प्रस्तुति आदि के क्रिया–कलापों से शैक्षिक वातावरण रोचक होगा।
- बालकों को क्रियाशील, कल्पनाशील और प्रयोगशील बनाने में शिक्षक की अहम भूमिका होगी।
- बालकों को आनंददायी शिक्षा की ओर अभिप्रेरित किया जा सकेगा।

संदर्भ

1 दवे, दीनानाथ (2001): प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा पद्धतियाँ, जयपुर, गीतांजली प्रकाशन।
2 दवे, दीनानाथ (2021), प्राथमिक विद्यालय की भाषा शिक्षा, जयपुर, गीतांजली प्रकाशन।
3 दवे, रमेश (2014) माँ–बाप बनना कठिन है दिल्ली, संस्कृति साहित्य विश्वास नगर, शाहदरा।
4 दवे, दीनानाथ, (2003) शिक्षकों से, जयपुर, गीतांजली प्रकाशन
5 सोनी, रामनरेश (1999) मांटेसरी पद्धति, आगरा, वाग्देवी प्रकाशन।
6 पाल, यश (2015) दि हिन्दू, फार ए चाइल्ड इस्पायर्ड एजुकेशन सिस्टम, 6 सितम्बर